(ट) ततो यथावद्विहिताध्वराय

तस्मै स्मयावेशविवर्जिताय।

वर्णाश्रमाणां गुरवे स वर्णी

विचक्षणः प्रस्तुतमाचचक्षे ॥

अन्वयः - ततः यथावत् विहित-अध्वराय तस्मै स्मय-आवेश-

विवर्जिताय वर्ण-आश्रमाणाम् गुरवे स विचक्षणः वर्णी

प्रस्तुतम् आचचक्षे।

P.T.O.

Scanned with CamScanner

अनुवाद - तदनन्तर विधिपूर्वक विश्वजित् यज्ञ ~~करने~~ करने वाले उस राजा को, जो गर्व के आवेश से वर्जित है तथा जो वर्ण और आश्रमों का ~~नि~~ नियामक है (रक्षा करने वाला) उस चतुर ब्रह्मचारी ने मन की बात कहनी शुरु की।

(ब) समाप्तविद्येन मया महर्षि -

विज्ञापितोऽभूद् गुरुदक्षिणायै।

स मे चिरायास्खलितोपचारां

तां भक्तिमेवागणयत्पुरस्तात् ॥

अन्वयः- समाप्तविद्येन मया महर्षिः गुरुदक्षिणायै विज्ञापितः अभूत्। स मे चिराय अस्खलित-उपचाराम् ताम् भक्तिम् एव पुरस्तात् अगणयत्।

अनुवाद - विद्या पढ़ चुकने पर मैंने महर्षि (गुरुजी) से गुरुदक्षिणा स्वीकार करने हेतु कहा। उन्होंने मेरी चिरकाल से की गई त्रुटिहीन उस भक्ति को ही सबसे पहले गिन लिया।

P. T. O.

Scanned with CamScanner

(ङ) निर्बन्धसञ्जातरुषार्थकार्श्य-
मचिन्तयित्वा गुरुणाहमुक्तः।
वित्तस्य विद्यापरिसंख्यया मे
कोटीश्चतस्रो दश चाहरेति॥

अन्वयः- निर्बन्धसञ्जातरुषा गुरुणा अर्थकार्श्यम् ~~अचिन्तयि~~
अचिन्तयित्वा अहम् उक्तः- 'विद्यापरिसंख्यया मे वित्तस्य
चतस्रः दश च कोटीः आहर इति।

अनुवाद -बार-बार हठ करने से बिगड़े या रुष्ट हुए गुरुजी
ने मेरी दरिद्रता का विचार किये बिना ही मुझे कह दिया -
'विद्या की गणना के अनुसार मुझे चौदह करोड़ स्वर्णमुद्राएँ
लाकर दो।

(च) इत्थं द्विजेन द्विजराजकान्ति-
रावेदितो वेदविदां वरेण।
एनोनिवृत्तेन्द्रियवृत्तिरेनं
जगाद भूयो जगदेकनाथः॥

P.T.O

Date
Page

अन्वयः - ~~विद्‌विदां~~ वेदविदां वरेण द्विजेन इत्थम् आवेदितः,
भूयः द्विजराजकान्तिः एनः निवृत -इन्द्रिय -वृत्तिः जगत् एकनाथः
एनं जगाद।
अनुवाद - जब वैदिक ब्राह्मणों में सर्वश्रेष्ठ ने यह बात कही, तो
फिर चन्द्रमा के समान सुन्दर तथा जितेन्द्रिय, परम धार्मिक
जगत् के नाथ राजा रघु ने इन्हें कहा।
(ण) गुर्वर्थमर्थी श्रुतपारदृश्वा-रघोः सकाशादनवाप्य कामम्।
गतो वदान्यान्तरमित्ययं मे मा भूत्परीवादनवावतारः ॥
अन्वयः - श्रुतपारदृश्वा गुर्वर्थम् अर्थी रघोः सकाशात् कामम्
अनवाप्य वदान्यान्तरम् गतः इति अयं मे परीवादनवावतारः
मा भूत्।
अनुवाद - शास्त्रज्ञ, शास्त्रमर्मज्ञ गुरुदक्षिणा के लिए याचना
करने वाले रघु के पास से न पाकर इच्छानुसार दूसरे दाता के
पास चले गये, यह मेरी निन्दा का नया अवतरण न होवे।

(ग) स त्वं प्रशस्ते महिते मदीये

वसंश्चतुर्थोऽग्निरिवाग्न्यगारे।

द्वित्राण्यहान्यर्हसि सोढुमर्हन्-

यावद्यते साधयितुं त्वदर्थम्॥

अन्वयः- स त्वम् मदीये प्रशस्ते महिते अग्न्यागारे वसन् चतुर्थः अग्निः इव द्वित्राणि अहानि सोढुम् अर्हसि, अर्हन् यावत् त्वदर्थम् साधयितुम् यते।

अनुवाद- वह तुम मेरी प्रशस्त पवित्र यज्ञशाला में रहते हुए चौथी अग्नि की तरह पूजनीय होकर दो तीन दिन सहन कर सकते हो, हे पूजनीय! जब तक मैं तुम्हारा प्रयोजन पूरा करने के लिए यत्न करूँगा।

(घ) तथेति तस्यावितथं प्रतीतः

प्रत्यग्रहीत्सङ्गरमग्रजन्मा।

गामात्तसारां रघुरप्यवेक्ष्य

निष्क्रष्टुमर्थं चकमे कुबेरात्॥

P.T.O.

अन्वयः - अग्रजन्मा तस्य अवितथम् प्रीतः 'तथा' इति सङ्गरम् प्रति अग्रहीत् रघुः अपि गाम् आत्तसाराम् अवेक्ष्य कुबेरात् अर्थम् निष्क्रष्टुम् चक्रमे ।

अनुवाद - ब्राह्मण कौत्स ने उसके सत्य को समझ लिया, अतः उन्होंने हामी भर दी और उसकी प्रतिज्ञा को ग्रहण कर लिया अर्थात् स्वीकार कर लिया, रघु ने भी पृथ्वी को धनरहित देखकर कुबेर से धन लेने या निकालने की इच्छा की अथवा निश्चय कर लिया कि कुबेर से कौत्स की गुरुदक्षिणा के लिए धन ले लिया जाये ।

(द) प्रातः प्रयाणाभिमुखाय तस्मै
सविस्मयाः कोषगृहे ~~मध्ये~~ नियुक्ताः ।
हिरण्मयीं कोषगृहस्य मध्ये
वृष्टिं शशंसुः पतितां नभस्तः ॥

अन्वयः - प्रातः तस्मै प्रयाणाभिमुखाय, कोषगृहे नियुक्ताः सविस्मयाः कोषगृहस्य मध्ये नभस्तः हिरण्यमयीं वृष्टिं पतितम् शशंसुः ।

P.T.O.

Scanned with CamScanner

अनुवाद- सुबह, उसको चलने के लिए तैयार हुए को, खज़ाने में नियुक्त रक्षकों ने आश्चर्ययुक्त हुओं ने खज़ाने के बीच आकाश की ओर से सोने की बरसात गिरती हुई कही।

(ध) तं भूपतिर्भासुरहेमराशिं
लब्धं कुबेरादभियास्यमानात्।
दिदेश कौत्साय समस्तमेव,
पादं सुमेरोरिव वज्रभिन्नम्॥

अन्वयः- भूपतिः अभियास्यमानात् कुबेरात् लब्धम् तं भासुरहेमराशिम् वज्रभिन्नम् सुमेरोः पादम् इव समस्तम् एव कौत्साय दिदेश।

अनुवाद- राजा ने आक्रमण किये जाने वाले कुबेर से प्राप्त वह चमकता हुआ सोने का ढेर, जो मानो वज्रायुध से काटा हुआ सुमेरु पर्वत का टुकड़ा हो, सारा ही कौत्स को दे दिया।

P.T.O.

Scanned with CamScanner

(ग) जनस्य साकेतनिवासिनस्तौ
द्वावप्यभूतामभिनन्द्यसत्वौ,
गुरुप्रदेयाधिकनिःस्पृहोऽर्थी
नृपोऽर्थिकामादधिकप्रदश्च ॥

अन्वयः - साकेतनिवासिनः जनस्य गुरुप्रदेयाधिकनिःस्पृहः अर्थी, नृपः अर्थिकामात् अधिकप्रदः च तौ द्वौ अपि अभिनन्द्यसत्वौ अभूताम्,

अनुवाद - अयोध्या में रहने वाले लोगों के द्वारा गुरु को देने से अधिक द्रव्य को लेने की इच्छा न रखने वाला याचक तथा राजा, जो याचक की कामना से अधिक देने वाला था- वे दोनों ही प्रशंसनीय व्यवहार वाले हुए,

Scanned with CamScanner